प्राथमिक कक्षाओं में साहित्य शिक्षण

कमलेश चंद्र जोशी

सामान्यतया स्कूलों में भाषा शिक्षण यांत्रिक रूप से करवाया जाता है। वर्ण, शब्द और वाक्यों में सिलसिलेवार चलने वाली इस प्रक्रिया में साहित्य के आनन्द से बच्चे महरूम रह जाते हैं। यह लेख भाषा शिक्षण के केन्द्र में साहित्य को लाने की पैरवी करता है।

हमारी मुख्यधारा की शिक्षा में प्राथमिक स्तर पर भाषा शिक्षण का सारा विमर्श बच्चों को पढ़ना-लिखना सिखाने की विधियों एवं उनके क्रियान्वयन तक ही सिमट कर रह जाता है। पढ़ना-लिखना सिखाने में साहित्य या पढ़ने का आनंद कहीं पीछे छूट जाता है। प्राथमिक स्तर पर हमारे अधिकतर स्कूलों के ज्यादातर बच्चे लम्बे समय तक 'पढ़ने' के आरंभिक कौशलों से ही जूझते रहते हैं। हमें लगता है कि यदि 'समझकर पढ़ने' के लिए साहित्य के पहलू को समुचित रूप से शामिल किया जाए तो यह एक कारगर तरीका हो सकता है। इस आलेख में मैंने प्राथमिक कक्षाओं में साहित्य से जुड़े कुछ मूल विचारों पर चर्चा करने का प्रयास किया है।

अनौपचारिक रूप से साहित्य शिक्षण की शुरुआत औपचारिक शिक्षा आंरभ होने से पूर्व बच्चों को कहानियां-कविताएं सुनाने से ही शुरू हो जाती है। कहानियों-कविताओं को सुनने के दौरान जहां बच्चे कथ्य से अपने अनुभवों को जोड़ रहे होते हैं वहीं दूसरों के अनुभवों को समझने का प्रयास भी कर रहे होते हैं। संरचना, किस्सागोई, मनोभावों का सहज प्रस्तुतिकरण और कल्पनाशीलता आदि साहित्य के मूल आधार हैं। साहित्य बच्चों के सोचने-समझने की दृष्टि को व्यापक बनाता है और उन्हें अपने सामाजिक व सांस्कृतिक मूल्यों पर भी पुनर्चिंतन का अवसर देता है। इससे आगे जब साहित्य औपचारिक शिक्षा का हिस्सा बनता है तब यह अधिक सघनता और आलोचनात्मक रूप से बच्चों के विकास का माध्यम बनता है। उदाहरण के लिए, अगर हम प्रेमचन्द की कहानी 'बड़े भाईसाहब' बच्चों के साथ पढ़ रहे हैं तो कहीं न कहीं इस कहानी के माध्यम से हम स्कूली व्यवस्था पर विचार कर रहे होते हैं और परीक्षा प्रणाली पर सवाल उठाने का प्रयास कर रहे होते हैं। इसी तरह तूलिका द्वारा प्रकाशित महाश्वेता देवी की कहानी 'क्यूं क्यूं छोरी' को भी बच्चों के साथ पढ़ते हुए बालिकाओं की शिक्षा, गरीब बच्चों की शिक्षा और उसकी मुश्किलों पर आसानी से बात कर सकते हैं। साथ ही बाल सुलभ सवालों के पूछे जाने के लिए स्थान निर्मित कर रहे होते हैं। इस प्रकार साहित्य शिक्षण सिर्फ आनन्द ही नहीं बल्कि अपने अनुभवों को व्यवस्थित करने और दूसरे के अनुभवों को गहराई से समझने के मौके प्रदान करता है। साहित्य के जरिए बच्चे अपने उन अनुभवों को भी आवाज दे रहे होते हैं, जिन्हें सामान्यतया वे दर्ज ही नहीं करते। उदाहरण के लिए, 'क्यूं क्यूं छोरी' जैसे सवाल सभी बच्चों के दिमाग में उठते हैं लेकिन वयस्कों की दुनिया में उनकी अभिव्यक्ति के अवसर नहीं मिलते, इसलिए वे बच्चों के स्वर नहीं बन पाते या 'बड़े भाईसाहब' जैसी सहज इच्छाएं भी सामाजिक दबावों और 'बड़ेपन' के बोझ तले दब जाती हैं। कहने का आशय है कि साहित्य शिक्षण के जरिए बच्चों को अपने अनुभवों को पाठ (टैक्स्ट) से जोड़ने का मौका दिया जाए और उस पर उनके साथ चर्चा के अवसर दिए जाएं तो यह बच्चों के विकास का और साथ ही समझकर पढ़ने का नायाब माध्यम बन सकता है।

साहित्य बच्चों को विविध अनुभव और अन्य संस्कृतियों से उनका परिचय भी सहजता से कराता है। उदाहरण के लिए, बच्चे रवीन्द्रनाथ टैगोर की किताब 'जोड़ा सांकोवाला घर' व सत्यजीत राय की 'जब मैं छोटा था...' में उनके बचपन के बारे में भी पढ़ सकते हैं। दोनों किताबें पढ़े-लिखे व संभ्रान्त परिवारों को समझने

लेखक परिचय

22 वर्षों से शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत हैं। भाषा शिक्षा, शिक्षक शिक्षा एवं बाल साहित्य में गहरी रुचि हैं और इन विषयों पर नियमित लिखते रहे हैं। 'प्रारम्भ शैक्षिक संवाद' पत्रिका के संपादक रहे हैं। आजकल अजीम प्रेमजी फाउण्डेशन, देहरादून में कार्यरत हैं।

के लिए आवश्यक विवरण मुहैया कराती हैं। वहीं प्रेमचन्द की 'ईदगाह', 'जू की कहानी' और 'इस्मत की ईद' समाज के हाशियाकृत तबके के परिवारों की कहानियां हैं। ये कहानियां आम बच्चों की जिंदगी से जुड़ी कहानियां हैं। इससे बच्चों के लिए सोचने का एक व्यापक परिप्रेक्ष्य खुलता है।

अध्यापकों को यह समझने की जरूरत है कि कक्षा में किसी पाठ को पढ़ाने का अर्थ केवल कठिन शब्दों के अर्थ बताना और इसके बाद पाठ के अंत में दिए गए प्रश्नों के उत्तर लिखवा देना भर नहीं है। मुख्यधारा शिक्षा में उपरोक्त दोनों चीजें करवाने से ही शिक्षण को पूर्ण मान लिया जाता है। इसके बजाय यह समझने की आवश्यकता है कि कक्षा में सबसे पहले विषयवस्तु पर अच्छी चर्चा की जाए और बच्चों को उसे अपनी जिंदगी से जोड़ने के मौके दिए जाएं। साथ ही बच्चों को भाषा सिखाने का उद्देश्य उनमें पढ़ने की आदतों का विकास करना है और पढ़ने में रुचि पैदा करना है। साहित्य के जरिए बच्चों में स्वाध्याय की प्रवृत्ति का भी विकास होता है जो आगे चलकर सीखने में स्वायत्त होने में मददगार बनता है। इसी में साहित्य के पहलू अंतर्निहित हैं। यदि साहित्य शिक्षण के जरिए बच्चों की अभिरुचि साहित्य अध्ययन के रूप में विकसित नहीं हो पाती है तो इसे इसकी असफलता ही मानना चाहिए।

साहित्य शिक्षण का बड़ा उद्देश्य यह भी है कि साहित्य आनंद के लिए है। अगर बच्चे 'बुढ़िया की रोटी', 'प्यासी मैना', 'पक्की दोस्ती', 'बस की सैर' या 'लालू पीलू', 'मैं भी...', 'कजरी गाय झूले पर', 'पिप्पी लम्बे मोजे' आदि पढ़ रहे हैं तो उसमें अपनी कल्पनाओं को जोड़ते हुए उसका आनंद लेते हैं। यहां उनकी कल्पना इन कहानियों की कल्पना से मेल खाती है। रोचक बात यह भी है कि बच्चे पढ़ने का आनंद अपने परिवेश से अलहदा कहानियों- 'कजरी गाय', 'पिप्पी लंबे मोजे' आदि में भी ले लेते हैं क्योंकि इसकी विषयवस्तु बच्चों की दुनिया के उन अनुभवों से जुड़ती है। इन कहानियों का फलक काफी व्यापक है और ये सभी बच्चों के संदर्भ को समेटती है। अगर बच्चे एकलव्य द्वारा प्रकाशित 'बिल्ली के बच्चे' पढ़ रहे हैं वे तो इसमें बिल्ली के बच्चों के तालाब में नहाने के अनुभव व उनके धुएं के पाइप से निकलने के अनुभव से सहज ही जुड़ते हैं।

बच्चों की साहित्य में रुचि उनके बेहतर सोचने-समझने में भी मदद करती है। इस वजह से भी बच्चों की साहित्य में रुचि विकसित करने के लिए शिक्षक कुछ प्रयास कर सकते हैं। बच्चों का ध्यान रचना की भाषायी खूबियों की ओर लाया जाना चाहिए। वे भाषायी सुन्दरता को पहचान सकें व सराह सकें। अर्थात् कक्षा में बच्चों का इस ओर ध्यान दिलाना बच्चों के सीखने-समझने की दृष्टि से उपयोगी है। शुरुआती कक्षाओं के नजरिए से देखें तो प्रयाग शुक्ल की 'धम्मक-धम्मक आता हाथी', 'ऊंट चला भई ऊंट चला', श्रीप्रसाद की 'हाथी चल्लम चल्लम', निरंकार देव सेवक की 'तितली और कली', 'टेसू राजा बीच बज़ार', सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की 'इब्नबतूता', रामकृष्ण खद्दरजी की 'बंदर भूप' और नागार्जुन की 'अकाल और उसके बाद'; आदि ऐसी कविताएं हैं, जो सहज और सरस हैं। इन कविताओं के शब्दों, लय और ध्वन्यात्मकता के पैटर्न में बच्चे आनन्द लेते हैं। इस पर बच्चों के साथ बातचीत करनी चाहिए। इसके साथ कुछ कविताओं की कल्पनाशीलता व चित्रात्मकता पर उनका ध्यान आकर्षित करने का प्रयास करना चाहिए। बच्चों की कुछ कविताओं की बानगी हम देख सकते हैं।

तितली व कली

हरी डाल पर लगी हुई थी/नन्हीं सुन्दर एक कली।
तितली उससे आकर बोली/तुम लगती हो बड़ी भली।
अब जागो तुम आंखें खोलो/और हमारे संग खेलो।
फैले सुन्दर महक तुम्हारी/महके सारी गली-गली।
कली छिटक कर खिली रंगीली/तुरन्त खेल के सुनकर बात।
साथ हवा के लगी भागने/तितली छूने उसे चली।

इसी तरह नागार्जुन की कविता 'अकाल और उसके बाद' को भी देखा जा सकता है। जहां कवि ने अकाल के बाद का चित्र खींचा है। इसका बच्चों को एहसास कराया जा सकता है।

कहानियों में भाषा के विविध प्रयोगों की तरफ बच्चों का ध्यान आकर्षित किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, देखें:

दोनों की मुसीबत में जान थी। हर वक्त पाबंदी, हर वक्त तकरार। अपनी मर्जी से चूं भी न कर सकते थे। कभी आरिफ को गाने का मूड आता तो भाईजान डांटते, ''चुप होता है या नहीं? हर वक्त मेंढक की तरह टर्राए जाता है।'' बाहर जाओ तो अम्मी पूछती, ''बाहर क्यों गए?'' अंदर रहते तो दादी चिल्लाती हाय मेरा दिमाग फटा जा रहा है शोर के मारे! अरी रज़िया, ''इन बच्चों को जरा बाहर हांक दे।'' जैसे बच्चे न हुए मुर्गी के चूज़े हो गए!

(एक दिन की बादशाहत, जीलानी बानो, रिमझिम-5, एनसीईआरटी, नई दिल्ली)

वहां थी वो! कजरी गाय पेट के बल लेटी, पेड़ के नीचे सो रही थी।
उसने सामने वाली टांगों से अपनी आंखें ढक रखी थीं।
कौआ बिलकुल उनके सामने जा उतरा।
हलके से, कजरी गाय के कान पर चोंच मारकर उसने पूछा, ''कजरी गाय क्या तुम जिंदा हो?''
कजरी गाय ने लंबी जंभाई ली।
''अरे! लगता है, मेरी आंख लग गई थी,'' कजरी गाय ने कहा।
''कां! मुझे लगा कि तुम पेड़ से गिरकर मर गई हो!'' कौआ चिल्लाया।

(कजरी गाय पढ़ने लगी, यूया विस्लैंडर, अनुवाद-स्वाती पुरंदरे, ए एण्ड बुक ट्रस्ट, गुड़गांव)

अगर हम अपनी पाठ्यपुस्तकों को देखें, तो अधिकतर में बच्चों के लिए अच्छी सामग्री की कमी नजर आती है। ज्यादातर सामग्री कृत्रिम व बोझिल दिखाई देती। क्योंकि साहित्य को आमतौर पर 'सीख' देने का माध्यम मान लिया जाता है। वह सीख फिर राष्ट्रवाद की हो या नैतिक आचरण की। इसमें बालमन की सर्वथा अनदेखी की जाती है। बच्चों की दुनिया कहानी, कविताओं में नहीं झलकती। अगर हमें किताबों के प्रति रुचि और पढ़ने के आनंद को दूरगामी लक्ष्य बनाना है तो स्कूल में बच्चों के लिए एक सुरुचिपूर्ण व समृद्ध पुस्तकालय की बात होनी चाहिए। इसकी अनुशंसा शिक्षा के अधिकार कानून में भी की गई है।

वर्तमान समय में हमारे स्कूलों में पुस्तकालयों की कमी दिखाई पड़ती है। एक तो विद्यालयों में पुस्तकालय नहीं हैं। अगर कुछ विद्यालयों में किसी परियोजना के तहत कुछ पुस्तकें उपलब्ध भी हैं तो वे बच्चों की दृष्टि से बहुत उपयोगी नहीं हैं। इनमें बच्चों की बहुत रुचि नहीं बनती। इसके साथ कक्षा की प्रक्रियाओं में यह कमी दिखाई पड़ती है कि कहानी-कविताओं को पढ़ाते समय हमारा ध्यान शब्दों के अर्थ बताने और पाठगत अभ्यास को पूरा करने पर ही टिका होता है। उनके साथ हमारी अधिकतर बातचीत पाठों के तथ्यात्मक पहलुओं को जानने की रहती है न कि विषयवस्तु को अपने अनुभव से जोड़ने की और उस पर अपनी प्रतिक्रिया देने की। इसके साथ ही कक्षा में हम बच्चों से रटे-रटाए उत्तरों की ही अपेक्षा करते हैं जबकि हमारी यह कोशिश होनी चाहिए कि बच्चे कहानियों-कविताओं से जुड़ें और उससे एक रिश्ता बनाएं। उसमें अपने अनुभव जोड़ें। उनका विश्लेषण करें जिससे वे एक अच्छे पाठक के रूप में विकसित हो सकें। अध्यापकों को यह भी समझना चाहिए कि बच्चों का भाषायी कौशल अच्छे तरीके से विकसित होता है तो यह अन्य विषयों में भी उनके सीखने को समृद्ध करता है। इन सबके लिए सबसे पहला प्रयास हम शिक्षकों को ही करना होगा। हमें साहित्य और बच्चों के साहित्य में स्वयं रुचि लेना सीखना होगा, तभी हम बच्चों के साथ साहित्य से जुड़े पहलुओं पर बात कर पाएंगे! ◆